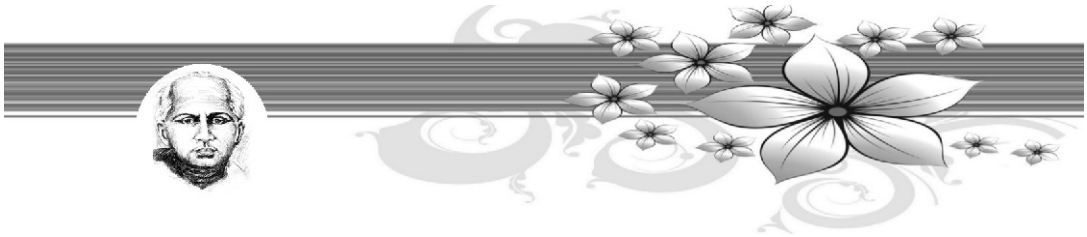

1

संत कुरियाकोस का जन्म और बचपन

कुरियाकोस के माता-पिता

कुरियाकोस एलियास चावरा के माता-पिता ईश्वरीय भय रखते थे। वे एक अच्छे काथलिक परिवार के आदर्श थे। संत चावरा अपनी पुस्तक 'आत्मानुतापम' में इसके बारे में कृतज्ञता-पूर्वक वर्णन करते हैं—''बपतिस्मा की कृपा से तूने मुझे अपना बनाया और स्वर्गीय आनन्द को मुझमें बढ़ने दिया, विश्वास में दृढ़ माता-पिता मुझे दिये। इसके अलावा विश्वास मुझमें बढ़ गया।''

उनके माता-पिता विश्वास में इतने मजबूत थे कि छोटा कुरियाकोस भी विश्वास की जिन्दगी में बढ़ गया। कुरियाकोस चावरा अपनी माँ की भक्ति के बारे में लिखते हैं—

''शिशु मेरे पोषण में न हो कमी कोई
दी मुझे तूने माँ अपार स्नेहमयी
असीम ममता से जब भी दूध पिलाया
पान कराया नाम जपों का अमृत पीयूष भी।
बैठे गोदी में उसी ममतामई माँ की
जाना मैंने धीरे-धीरे ईश प्रेम को भी।''

कुरियाकोस और मरियम की छः संतान थीं। चार लड़कियाँ और दो लड़के। कुरियाकोस चावरा सबसे छोटे थे।

जन्म और बचपन

छोटे कुरियाकोस का जन्म 10 फरवरी 1805 को केरल राज्य के कैनकरी गाँव में हुआ। चावरा परिवार विख्यात पकलोमट्टम घराने की उपशाखा है। प्रभु येसु के शिष्य संत थोमस के हाथों बपतिस्मा ग्रहण किये। प्रथम ईसाई परिवारों में एक है पकलोमट्टम परिवार। चावरा अपने जीवन रूपी उपहार के लिए ईश्वर के प्रति बहुत कृतज्ञ और प्रसन्नता से भरपूर होते हुए ये गाते हैं—

''सर्वशक्तिमान ईश्वर जो आदि में था
तूने मुझे आदम के पुत्र में सृष्टि की
हे प्रभु आपकी दया अपरम्पार हैं।
मुझ पापी के लिए आपकी इच्छा
बनाया हमें अपने स्वरूप में
मेरी सब अयोग्यताओं के बावजूद भी
दिखाई तूने अपनी अपार कृपा।''

बपतिस्मा और धन्य कुँवारी मरियम को समर्पित

जन्म के बाद आठवें दिन चावरा के माता-पिता उन्हें चैनकेरी के पैरिश में लाये। बालक का नाम पिता के नाम पर कुरियाकोस रखा गया।

''हे दया के स्रोत तेरी कृपा के झरने से
मेरी आत्मा शुद्ध हो गई
मैं इन सब के लिए ईश्वर
कैसे धन्यवाद दूँ आपको
जीवन यात्रा की शुरूआत में ही
बपतिस्मा की कृपा से मुझे
बना लिया अपना पुत्र मुझे।''

सितम्बर 8 को, माँ मरियम के जन्म दिन पर चावरा को उनकी माँ ने गोद में लेते हुए वेच्चूर गिरजाघर में माँ मरियम के चरणों में समर्पित कर दिया। भविष्य में उन्होंने सी० एम० आई० धर्मसंघ (कार्मेल की निष्कलंक माता मरिया के दास) की स्थापना की। बचपन में अपनी माँ से प्राप्त मरिया भक्ति ने ही उन्हें यह प्रेरणा दी।

कुरियाकोस की माँ, जग जननी माँ मरियम की भक्ति में सबसे आगे थी। अपने बच्चें की शारीरिक देखभाल के साथ ही साथ वे उसके आत्मिक जीवन का बड़ा ध्यान रखती थी। ईश्वर के इष्ट पुत्र के रूप में उनका पालन-पोषण करने में वे किसी भी बात की कमी नहीं करती थी। अपने बेटे को प्रार्थना एवं ख्रीस्तीय विश्वास के रहस्यों को सिखाने में वे सदा उत्सुक रहती थी। संत कुरियाकोस चावरा कहा करते थे कि ''मेरी माँ, मेरा आश्रय'' ये शब्द कहकर शुरू किया गया हर काम सफल हुआ।

बच्चे का पालन-पोषण

कुरियाकोस चावरा की माँ की भक्ति से यही पता चलता है कि वह अपने बालक को विश्वास और अच्छे व्यवहार से बढ़ते देखना चाहती थी। बाल्यावस्था एक बहुत ही महत्वपूर्ण समय होता है जिसमें हर एक मनुष्य के व्यक्तित्व की नींव रखी जाती है। यह सब एक परिवार में ही प्रभावशाली होता है। चावरा सर्वशक्तिमान ईश्वर के प्रति अपनी माँ के लिए बहुत धन्यवादी हैं। वह आनन्द और कृतज्ञता से इस प्रकार गाते हैं—

''मुझ नन्हें बालक का पोषण करती
दुख-कष्ट में भी करती देखभाल
माँ ने सिखाई प्रार्थनायें अपार
सिखाया पवित्र त्रित्व के बारे में
येसु का मानव बनकर जन्म लेना
दुख कष्ट सहे पिलातुस से
फिर मृत्यु से पुनः जीवित हुए
सबका विवरण दिया मुझे।''

इसके बाद यह संक्षिप्त में आता है कि किस तरह माँ ने अपने पुत्र को अनुशासन में रखा।

''जब वह मुझसे अप्रसन्न थी
अपनी नज़र द्वारा किया अनुशासित
न प्रयोग किया कभी मेरे लिए छड़
और न कभी किया कठोर स्पर्श।''

यहाँ पर एक माँ बच्चे के अच्छे सम्बन्ध का उदाहरण हैं। एक माँ जो अपने बच्चे को अच्छी तरह से बढ़ने के लिए अनुशासन में रखती है। जब भी बच्चा अच्छा व्यवहार करता, तो माँ उसकी प्रशंसा करती और जब अच्छा व्यवहार नहीं करता, तो माँ उस पर असंतुष्टता प्रकट करती।

स्कूल शिक्षा

आज की तरह उन दिनों केरल में ज्यादा स्कूल नहीं थे। पहला सरकारी स्कूल ट्रेवनकोर राज्य में 1817 में शुरू हुआ। उसके पहले गाँव के स्कूल थे जिसे 'कल्लरी' कहा जाता है और यह अधिक हिन्दू अध्यापकों द्वारा चलाया जाता था। इन स्कूलों में मलयालम की लिपिया एवं कुछ गणित भी पढ़ाया जाता था। चावरा ने भी इसी 'कल्लरी' स्कूल से पाँच वर्ष तक पढ़ाई की, मलयालम, तमिल और संस्कृत भाषायें सीखीं। वह लिखते हैं—

''शारीरिक और मानसिक बढ़ोत्तरी के समय भी
मैं अपने पिता ईश्वर का था प्रिय
बीत गये मेरे जीवन के पाँच वर्ष
मिली शिक्षा हिन्दू गुरू से मुझे।''

संत चावरा यह भी बताते हैं कि आरम्भ के कुछ वर्ष माँ के साथ बहुत अच्छे थे किन्तु 'कल्लरी' में पाँच वर्ष बहुत कठिनाइयों के थे क्योंकि वहाँ पर उन्हें कई पापों व प्रलोभनों के अवसरों का सामना करना पड़ा। जब पुरोहिताई की बुलाहट मिली तो उन्हें कुछ चैन मिला।

2

दिव्य बुलाहट

जब चावरा 'कल्लरी' में अपना पाँचवाँ वर्ष समाप्त कर रहे थे तो वह अपने जीवन के 10 वर्ष समाप्त कर रहे थे वही समय था जब उन्हें दिव्य बुलाहट मिली। वह इसके बारे में आनन्दपूर्वक लिखते हैं—

''जब हुए जीवन के दस वर्ष पूरे
आपने दी बुलाहट मुझे प्रभु
मैं जान गया पूर्ण रूप से
बुलाया मुझे आपने ही।''

जब चावरा ग्यारह वर्ष के थे तब ऐसे ही फादर थोमस पालाक्कल उन्हें घर मिलने गये और उन्होंने चावरा को पल्लीपुरम सेमनरी में आमंत्रित किया। चावरा के माता-पिता को लगा कि इस ग्यारह वर्ष की छोटी आयु में सेमनरी

जाना बहुत जल्दी होगा। माता-पिता ने दो साल पल्ली पुरोहित के पास रहने दिया और तेरह वर्ष की आयु में सन् 1818 में चावरा सेमिनरी चले गये। पुरोहित लोग वैदिक विद्यार्थियों को अपने पास रखकर शिक्षा देते थे। ऐसा करने वाले पुरोहितों को 'मल्पान' कहा जाता था।

सेमिनरी जीवन में कुरियाकोस को कठिन परीक्षाओं का सामना करना पड़ा। माता-पिता एवं बड़े भाई की अचानक मृत्यु ने परिवार को अनाथ बना दिया। बड़े भाई की पत्नी एवं एक लड़की के अलावा कोई न था। विधवा और बेसहारा भतीजी की जिम्मेदारी तथा उनके पालन-पोषण लोगों की राय थी कि कुरियाकोस सेमिनरी छोड़कर परिवार की जिम्मेदारी उठा लें। कुरियाकोस पवित्र परमप्रसाद में विद्यमान ख्रीस्त के आगे घुटनों के बल पड़े प्रार्थना कर रहे थे, ''प्रभु मेरी सहायता कर।'' माँ मरिया से प्रार्थना की, ''माँ अपने बेटे की पुकार सुन और माँ ने पुकार सुनी और पुकार अपने प्रिय पुत्र कुरियाकोस की माँ तक पहुँची। समस्या हल हो गई। बड़े भाई के एक साले ने अपनी बहन व भानजी की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। चावरा का हृदय खुशी से उछल पड़ा। वापस सेमिनरी में आकर पुरोहिताई की शिक्षा शुरू कर दी। मन का विश्वास और भी दृढ़ हो गया।''

कुरियाकोस पल्लिपुरम सेमिनरी में सबसे कम उम्र के विद्यार्थी थे। परन्तु पढ़ाई, पुण्याभ्यास, कर्मानुष्ठान तथा सेवन तत्परता आदि कार्यों में वे सबसे आगे थे। गुरु मल्पान के दैनिक जीवन ने कुरियाकोस पर बड़ा प्रभाव डाला। फादर पालाक्कल की भक्ति, प्रार्थना तथा मातृ-भाव को कुरियाकोस ने जीवन भर अपने हृदय में संजोये रखा। कुरियाकोस अच्छी तरह जानते थे कि पुरोहित ऐसे होने चाहिए जो ज्ञान, धार्मिक योग्यता से पूर्ण हों। भविष्य में लोगों को शुभ संदेश सुनाना हैं, अत: सेमिनरी में रहकर उसकी तैयारी करनी हैं। कहा जाता है कि जैसा सेमिनरी में होगा वैसा ही पुरोहित होगा। ज्ञान तथा पवित्रता में सबसे आगे रहने का चावरा हमेशा ध्यान रखते थे। इस अध्ययनशील जीवन में उन्होंने मलयालम के अतिरिक्त संस्कृत, सीरियन, लाटिन, पोर्तुगीज तथा इटालियन आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उस समय अंग्रेजी भाषा सीखना काथलिक लोगों के लिए निषेद था।

पुरोहिताभिषेक

बचपन से चावरा का सपना था, पुरोहित बनना। वे जानते थे कि भक्ति और सही ज्ञान के बिना जो पुरोहित बनता है वह अपनी ही आत्मा के विनाश के साथ-साथ दूसरों की भी आत्मा के विनाश का कारण बन जाता है। उनके आध्यात्मिक गुरु फादर लियोपोल्द मानते थे कि फादर कुरियाकोस एक संत आत्मा है। इसलिए फादर कुरियाकोस के स्वर्गवास होने के बाद उन्होंने लिखा— ''जैसे उनके साथी पुरोहित-गण साक्षी देते हैं, कुरियाकास का जीवन संपूर्ण रूप से ईश्वर की सेवा में समर्पित था। उनका पुरोहिताभिषेक अर्तुकल पल्ली में सन् 1829 नवम्बर को वेरापोली विकारी अपस्तोलिक धर्माध्यक्ष मौरेलियूस स्तबिलीनी के कर-कमलों द्वारा हुआ। यद्यपि यह पुण्य दिन देखने को उनके माता-पिता और भाई जीवित नहीं रहें तो भी उनकी पल्ली चेन्ननकरी से सहस्त्रों लोगों ने उसमें भाग लिया। इसके बाद उन्हें पुलिन्कुन्नु, चैन्नन्करी आदि पल्लियों में ख्रीस्त के शुभ-संदेश को सुनाने के लिए भेजा गया। आध्यात्मिक चेतना से भरे उनके प्रवचनों ने बड़ी संख्या में लोगों को आकर्षित किया। उस समय गिरजाघरों में आध्यात्मिक साधना के प्रवचन बहुत कम थे। इसलिए हर पल्ली के लोग उन्हें बुलाते थे और फादर कुरियाकोस हर जगह घूम-घूमकर लोगों के आध्यात्मिक उन्नति के लिए प्रवचन देते रहे। उसके बाद उनके गुरु मल्पान पालाक्कल थोमस ने अध्यापन कार्य में उनकी सहायता करने के लिए उन्हें सेमिनरी बुलाया, जहाँ उन्होंने स्वयं अध्ययन किया था।''

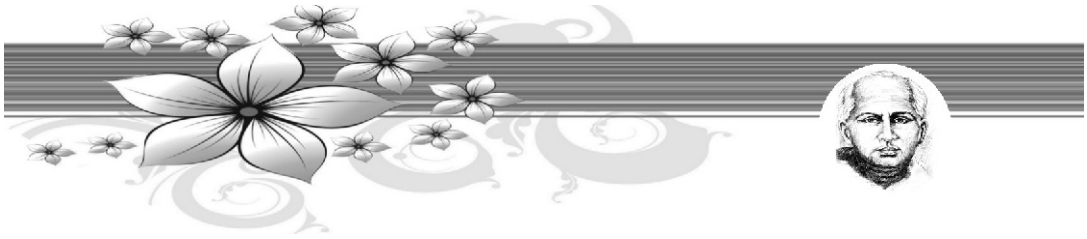

3

संत चावरा के अनूठे तथा ऐतिहासिक कार्य

दर्शन भवन का प्रारम्भ

संत कुरियाकोस चावरा के गुरू आचार्य पालाक्कल थोमस और उनके आत्ममित्र आचार्य पोरूकरा थोमस जब भी मिलते थे, सन्यास जीवन की चर्चा करते थे। दुनियादारी सब छोड़कर वनवास करना ही उनकी इच्छा थी पुरोहिताभिषेक के बाद अपनी पहली पूजा अर्पण में ईश्वर से संत कुरियाकोस का निवेदन था—सन्यास समाज की स्थापना। इन तीनों महापुरूषों का संगम भारतीय कलीसिया के लिए आध्यात्मिक त्रिवेणी संगम साबित हुआ। इससे उमड़ी अमृतधारा विश्वासियों की आध्यात्मिक जीवन की भरपूर सिंचाई करती रही। इन तीनों के साथ फादर पोरूकरा थोमस के साथी कणियन्तरा याकूब भी शामिल हो गये। वे चारों मिलकर धर्माध्यक्ष स्टबिलीनी के पास गये उनसे अनुमति और आशीर्वाद पाने। उनके वनवास का आग्रह देखकर धर्माध्यक्ष ने निर्देश दिया—''आप दो-तीन पुरोहित ऐसे हैं, जो लोगों को आत्मिक मार्गदर्शन दे सकते हैं। आप लोग ही वनवास गये तो उन्हें कौन सिखाएगा ? आप लोगों

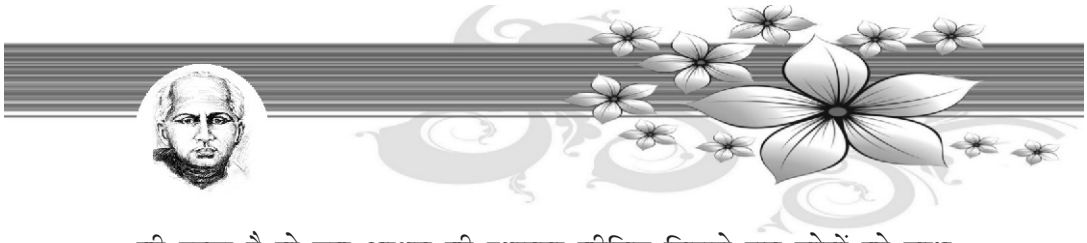

की इच्छा है तो एक आश्रम की स्थापना कीजिए जिससे सब लोगों को लाभ होगा। यह सुनकर फादर पालाक्कल ने कहा—''आपने जो बताया, अच्छा कार्य है, लेकिन यहाँ कोई राजा या धनी लोग नहीं हैं जो इसमें मदद करे।''

धर्माध्यक्ष ने सांत्वना दी—''आपके मन में उत्साह है तो मार्ग भी निकल आयेगा। यहाँ के ईसाई लोग आप की सहायता करेंगे।'' धर्माध्यक्ष से अनुमति और आशीर्वाद लेकर वे सन्यास आश्रम के निर्माण के प्रारम्भ कार्यों में लग गए।

धर्माध्यक्ष से आशीर्वाद एवं अनुमति मिलने के बाद दर्शन भवन का सपना साकार होने जा रहा था और वह उसके लिए जगह ढूँढ़ने जा रहे थे। जगह के बारे में उनका अपना मानदण्ड था। सन्यास भवन होने के नाते ऐसी जगह हो जहाँ जनावास कम हो, स्वच्छ हवा और पानी सुलभता से मिल जाये। कोई पहाड़ी या टीला हो, वाहन पहुँचने का रास्ता हो और जलमार्ग से भी पहुँच सके। ऐसी जगह ढूँढ़कर कोई 15-16 टीला टेकरी देखकर आयें। लेकिन किसी न किसी कारण से वह उन्हें पसंद न आया। कहीं पानी का आभाव था, तो कहीं सड़क नहीं थी। अंत में कुड़मालूर के पास पुल्लरीकुन्नु देखा। सबको वही जगह पसन्द आयी। बहुत ही सुन्दर पहाड़ी, जल भी, सुलभता से जाने का रास्ता भी अच्छा और जलमार्ग से भी पहुँच सकने योग्य। उधर ही दर्शन भवन प्रारम्भ करने का निर्णय लिया।

उधर सन्यास आश्रम का निर्माण कार्य प्रारम्भ करने लगे, तो उन्हें पता चला कि वहाँ एक ख्रीस्तीय आश्रम बनाने से वहाँ के हिन्दू लोगों में असंतोष हैं। वे उस पहाड़ी को देवी का स्थान मानते हैं। यह सुनकर वे बड़े असमंजस में पड़ गये कि इस समस्या का निवारण कैसे हो। तभी एक धनी मुसलमान व्यापारी जेनार उसके पास आकर बोला—''आप लोग अपने निर्णय से विचलित न हो। यहाँ के हर टीला-टेकरी में किसी न किसी देवी या देवता का स्थान मानते हैं। क्या इसी वजह से कोई और यहाँ कुछ न कर सकेगा ? आप लोग सधैर्य निर्माण कार्य प्रारम्भ कीजिए। मैं आप लोगों का साथ दूँगा।''

लेकिन स्थापक पिताओं ने एक ही स्वर में जवाब दिया—''किसी दूसरे धर्म के लोगों की भावनाओं को चोट पहुँचाकर हमें कोई आश्रम नहीं बनाना है।'' उनका मानना था कि ईंट और पत्थर से आश्रम बनाने से महत्वपूर्ण है मानव

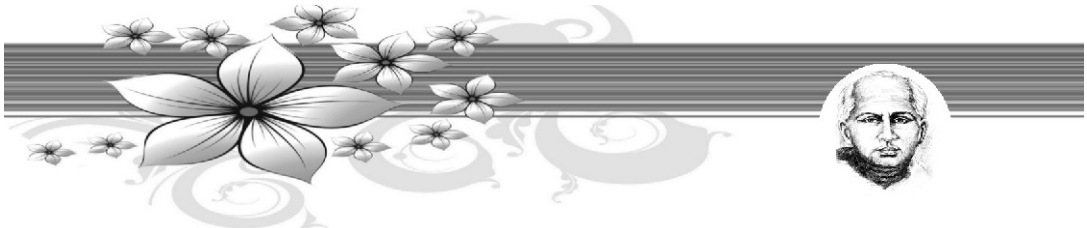

हृदयों में प्रेम और भ्रातृत्व को बनाये रखना। उन्हें यकीन था कि यह दर्शन भवन का निर्माण ईश्वर की इच्छा है तो वही सही जगह दिखायेगा और वह सच निकला। ईश्वर ने उन्हें ऐसी सुन्दर जगह दी जैसी उनके मन की कामना थी। वह था मान्नानम टीला। वहाँ सन् 1839 में आरम्भ हुए निर्माण कार्य में उन्होंने जेनार मुसलमान और उसके कारीगरों का सहयोग भी लिया।

आज्ञापालन की कसौटी

आश्रम के निर्माण के लिए मान्नानम टीला चुनने के बाद धर्माध्यक्ष स्तबिलीनी ने आश्रम की नींव डाली और आश्रम का निर्माण कार्य तेज़ी से आगे बढ़ने लगा। काम करने वाले लोग और फादर, एक साथ भोजन करते और एक साथ प्रार्थना करते थे। पर जल्दी ही इस निश्छल आकाश पर काले बादल छा गये। धर्माध्यक्ष स्तबिलीनी के बदले एक नये धर्माध्यक्ष आये—'फ्रांसिस सेवियर'। प्रारम्भ में वह आश्रम निर्माण में सहयोग देते थे और संत चावरा और उनके सहयोगियों का सम्मान करते थे। कोई भी भला कार्य हो उसकी आलोचना करने वाले कुछ लोग होंगे ही। उन्हें सुनकर नये धर्माध्यक्ष, संत चावरा और उनके सहयोगियों को संदेह की दृष्टि से देखने लगे। एक दिन उन्होंने इन तीनों को बुलाकर पूछताछ की, जैसे बड़े अपराधियों से करते हैं।

एक हफ्ते के अंदर संत चावरा को धर्माध्यक्ष का पत्र मिला। खोलकर पढ़ा तो सबको वज्रघात सा लगा। पत्र संत चावरा को दूर एक गिरजा में नियुक्त करने की आज्ञा थी। संत चावरा अपना पक्ष धर्माध्यक्ष के सामने रखने के लिए उनसे मिलने गये। जब वह बोलने लगे तो धर्माध्यक्ष ने कड़े शब्दों में कहा, ''ज्यादा मत कहो आज्ञा का पालन करो।'' चावरा ने उनसे कहा, ''मुझे क्षमा कीजिए।'' और धर्माध्यक्ष के आज्ञानुसार ही किया। कुछ ही दिनों में फादर पोरूकरा थोमस को भी दूर प्रदेश में नियुक्त करने की धर्माध्यक्ष की आज्ञा मिली। तीनों ने निर्णय किया, ''बिना कुछ कहे आँख मूंदकर आज्ञा का पालन करें।''

अब आश्रम के निर्माण का कार्य सही रूप से आगे नहीं बढ़ सका। संत चावरा और फादर पारूकरा को दूर जाना पड़ा और फादर पालाक्कल सेमिनरी के प्राचार्य होने के कारण आ भी नहीं सकते थे। एक तपोवन का निर्माण अब

तीनों की तीव्र इच्छा और सपना था, लेकिन वह सपना सच होते-होते टूट गया। जल्दी ही उनकी आज्ञापालन की श्रद्धा देखकर धर्माध्यक्ष के सभी संदेह दूर हो गये और उन्हें वापिस आश्रम के निर्माण में भेज दिया। आश्रम का निर्माण कार्य पुन: तेज़ी से चलने लगा। उन तीनों के जीवन की निर्मलता, सरल स्वभाव और स्नेहपूर्ण व्यवहार ने मान्नानम और उसके समीप प्रदेश के लोगों के दिलों को जीत लिया और धर्माध्यक्ष भी उनसे प्रसन्न होकर सभी प्रकार के सहयोग देते रहे। इसी धर्माध्यक्ष ने संत चावरा से प्रभावित होकर सभी पुरोहितार्थियों के परीक्षक और सेमिनारों का प्राचार्य नियुक्त किया।

धर्मसंघ की स्थापना

मान्नानम आश्रम का कुछ भाग जब रहने योग्य बन गया तो वहीं सन्यास समाज के प्रथम सदस्यों का रहना भी आरम्भ हो गया। लेकिन इस छोटे दल को धर्मसंघ के रूप में विविध मान्यता प्राप्त नहीं हुई। इसी बीच 1841 में सन्यास समाज के पहले प्रवर्तकों में से फादर थोमस पालाक्कल का स्वर्गवास हो गया और 1846 में फादर थोमस पोरूकरा भी इस संसार से विदा हो गए। दोनों आचार्यों के स्वर्गवास के बाद धर्मसंघ की सारी जिम्मेदारी संत चावरा पर आ गई। प्रार्थना-निरत जीवन, मानव सेवा, ध्यानयोग और कर्मयोग—यही था मान्नानम के सन्यास समाज के तपस्वी जीवन का सार। धर्मसंघ रूपी लता में

खाद पानी देकर उसका पालन पोषण करने के साथ-साथ वे नई-नई पद्धतियों की खोज करते रहे। मानव सेवा द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार करना उनके जीवन का लक्ष्य था।

8 दिसम्बर 1855 को माता मरियम के निष्कलंक गर्भागमन के पर्व के दिन सन्यास समाज के नियमावली को मान्यता देकर संघ को अधिकारिक मान्यता दी गई। उसी दिन संत चावरा ने बड़ी पवित्र मिस्सा के पहले मार्सलीनीस मिशनरी के सामने तीन व्रत धारण किये और अपने आपको संघ की सेवा के लिए समर्पित कर दिया। उसी दिन उन्होंने 'पवित्र घराने का कुरियाकोस एलियास' नाम स्वीकार किया। संत चावरा को मान्यता प्राप्त धर्म-संघ का मठाधिकारी घोषित किया और उनके सामने संघ के पहले 10 सदस्यों ने व्रत समर्पण किया। संघ का नाम ''निष्कलंक कुँवारी मरिया का दास संघ'' रखा गया। बाद में संघ का नाम ''कर्मेलीत्ता निष्पादुक तीसरी सभा'' रखा गया। आज इस संघ को 'निष्कलंक मरिया का कार्मेलाइट' कहते हैं।

मान्नानम में संघ के पहले केन्द्र की स्थापना के बाद केरल के विभिन्न सात स्थानों में और केन्द्र स्थापित होने पर इस संघ ने केरल की क्लीसिया के आत्मिक नवीनीकरण में काफ़ी प्रगति प्रदान की। संत चावरा जीवन भर इस संघ के परमाधिकारी रहें।

छापेखाने की स्थापना एवं प्रकाशन

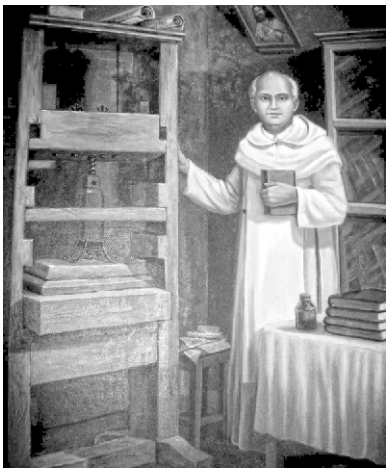

संत चावरा अच्छी तरह जानते थे कि ख्रीस्त के संदेश को जन-जन तक पहुँचाने के लिए प्रेस कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसके लिए वह बार-बार प्रयास करते रहते थे। पाश्चात्य राज्यों में छापाखानों ने जन-जीवन में जो महत्वपूर्ण परिवर्तन लाया था उसके बारे में संत चावरा भली-भाँति अवगत

थे। उनका आग्रह था कि लोगों के धार्मिक एवं सामाजिक उत्थान के लिए मलयालम में भी अनेक ग्रन्थों का प्रकाशन हों। उस समय लोगों के पास तमिल भाषा में छपी गिनी-चुनी किताबें थीं या मलयालम में कुछ हस्तलिखित पुस्तकें। इसलिए उन्होंने सोचा कि एक छापाखाने की स्थापना की जाये। लेकिन अब तक उन्होंने कोई छपाई की मशीन देखी तक नहीं थी। जब उन्होंने इसके बारे में चर्चा की तो उनकी प्रतिक्रिया यह थी कि जिस यंत्र को अब तक देखा नहीं उसके बारे में महत्वाकांक्षा रखना और उसके लिए परिश्रम करना मूर्खता है। छापाखाने की स्थापना एवं उनके विचार और प्रयास देखकर समझदार लोग भी कहने लगे कि यह उनके पागलपन का प्रारम्भ है। किन्तु लोगों का मत इस ओजस्वी व्यक्ति के उत्साह को कम नहीं कर सका।

उस समय ट्रावनकोर प्रदेश में दो ही प्रेस थीं। एक कोट्टयम का सी०एम०एस० प्रेस और दूसरा तिरूवनन्तपुरम का सरकारी प्रेस। वे प्रेस देखने कोट्टयम गये तो प्रेस वालों ने उन्हें प्रेस देखने की अनुमति नहीं दी। तब वे तिरूवनन्तपुरम की सरकारी प्रेस में गये और प्रेस का काम तथा मशीनों के बारे में काफ़ी जानकारी ली। संत चावरा हस्तशिल्प में रुचि रखते थे। अत: मान्नानम लौट कर उन्होंने केले के पेड़ से प्रेस का नमूना बनाया और एक बढ़ई को बुलाकर उसी नमूने के अनुसार लकड़ी से प्रेस बनवायी। उसकी मेज काले पत्थर से बनी थी।

प्रेस बन जाने के बाद भी उन्हें कई बाधाओं को पार करना था—जैसे अक्षरों का टाईप, स्याही, कागज और छपाई के लिए सरकार की अनुमति। अथक प्रयास और कई लोगों के सहयोग से एक-एक जरूरतों की पूर्ति की। यही था मान्नानम सेंट जोसेफ प्रेस।

संत चावरा द्वारा निर्मित लकड़ी का छपाई यंत्र अब भी मान्नानम में सुरक्षित है। वह उनकी बुद्धिमत्ता, दीर्घदर्शिता, धैर्य और सहनशीलता का परिचायक है। वहाँ कोई ऐसा ईसाई घर नहीं होगा जहाँ इस प्रेस से छपी कोई किताब न हो। रोकोस पाखण्ड के विरुद्ध संत चावरा के समय में यह प्रेस एक वज्रायुद्ध सिद्ध हुआ। मलयालम में प्रकाशित दैनिक समाचार पत्र का प्रारम्भ भी वहीं से हुआ था।

भारत का पहला सन्यासिनी मठ

उन दिनों केरल में स्त्रियों को धर्मसंघीय जीवन जीने की सुविधाएँ नहीं थीं। अनेक स्त्रियाँ ईश्वर की सेवा में अपना जीवन समर्पित करने की इच्छुक थीं। फादर लियोपोल्द संत चावरा के बारे में लिखते हैं—

''स्त्रियों के लिए एक मठ की स्थापना करने की संत चावरा की अभिलाषा थी, जिससे वहाँ की स्त्रियाँ एवं युवतियाँ आध्यात्मिक ज्ञान के बारे में सीख सकें और एक अच्छे ख्रीस्तीय के रूप में उभर सकें।'' संत चावरा और फादर लियोपोल्द ने उन्हें एक नई दिशा प्रदान की। उन्होंने इस विचार को धर्माध्यक्ष के समक्ष रखा और धर्माध्यक्ष ने उसे स्वीकृति दी। फादर लियोपोल्द को विधवा एलीशा और उनकी बेटी अन्ना के बारे में पता चला कि वे एक समर्पित जीवन बिताना चाहते थे। वे बहुत वर्षों से एक कोन्वेन्ट (मठ) की स्थापना के लिए प्रार्थना कर रहे थे और उन्होंने पहले से ही जगह निर्धारित की थी किन्तु उस जगह पर किसी कारणवश उस मठ के बदले पुरोहितार्थियों के लिए सेमिनरी प्रारंभ की।

इस सन्यासिनी समाज की शुरूआत करते समय संत चावरा के पास केवल 18 रुपये की पूँजी ही थी, लेकिन उन्हें विश्वास था कि धन की कितनी भी कमी हो, मगर ईश्वर साथ हैं तो सब कुछ संभव है। संत चावरा ने फादर लियोपोल्द बेकारो ओ०सी०डी० के सहयोग से स्त्रियों के लिए कार्मेल की माता (सी०एम०सी०) नामक धर्मसंघ की स्थापना की। मंगलवार, 13 फरवरी 1866 को कूनम्माव में इस संघ की स्थापना हुई।

एलीश्वा, अन्ना, तेरेसा और क्लारा ये चार इस संघ की प्रथम सदस्या थी। बाँस और नारियल के पत्तों से बने मठ, लोगों की सहायता से आठ महीने के अंदर पक्की इमारत में बदल गये। नारियों को भक्ति और ईश्वर सेवा सिखाना और उनके द्वारा युवतियों को हस्तकला एवं पढ़ाई में प्रशिक्षण देना आदि कार्यों

के लिए इस मठ की स्थापना करना ही उनका उद्देश्य था। मठ की स्थापना के बाद अनेक महिलाएँ सन्यासिनी जीवन की ओर आकर्षित हो गई और तब अधिक मठों की स्थापना हुई।

पिछली सदी में स्त्रियों के शिक्षित होने के बारे में किसी ने नहीं सोचा था। संत चावरा जानते थे कि स्त्रियों का शिक्षित होना और उन्हें हस्तकला सिखाना देश की प्रगति के लिए जरूरी हैं। सी० एम० सी० सन्यासिनी समाज का प्रारंभिक उद्देश्यों में एक था—''नारी शिक्षा।'' मठ की स्थापना करके स्त्रियों की समस्याओं को स्त्रियों द्वारा सुलझाने के लिए स्त्रियों का एक सशक्त समूह बनाने का प्रयास संत चावरा ने किया। पहले सन्यासिनियों को हस्तकला सिखाकर उनके द्वारा गाँव-गाँव की स्त्रियों को सिखाने की पद्धतियों को आरम्भ किया था।

नारी शिक्षा में सी० एम० सी० सन्यासिनी समाज ने जो कार्य किया है और अब भी कर रही हैं बहुत सराहनीय हैं।

शिक्षा प्रवर्तक

संत चावरा अच्छी तरह जानते थे कि समुदाय तथा समाज की उन्नति के लिए विद्यालयों की भूमिका कितनी महत्वपूर्ण है। उस समय केरल की जनता शिक्षा के क्षेत्र में बहुत पीछे थी। अब केरल 100 प्रतिशत शिक्षित प्रदेश हैं और उसका श्रेय संत चावरा और उसके सहयोगियों को हैं। सन् 1855 में संत चावरा ने एक विकार जनरल होने के नाते सभी गिरजाघरों के साथ में एक स्कूल खोलने का आदेश दिया।

हर एक गिरजाघर के पुरोहितों ने इस आदेश का पूर्ण रूप से स्वागत किया और इसके परिणामस्वरूप जहाँ कहीं भी कैथेलिक चर्च थे वहाँ की जनता पूर्ण रूप से शिक्षित हो गई। एक बार उन्होंने पूर्व सूचना दी कि विद्यालयों की स्थापना में लापरवाही दिखाने वाले गिरजाघर बंद कर दिये जायेंगे। शिक्षा के क्षेत्र में संत चावरा ने जितनी दिलचस्पी दिखाई उसकी कितनी भी तारीफ की जाये, वह थोड़ी है। संत चावरा बचपन से ही संस्कृत भाषा में प्रवीण थे। उन्होंने यह बात अच्छी तरह से समझ ली थी कि भारत में ख्रीस्त के सुसमाचार का प्रचार करने के लिए भारतीय संस्कृति तथा भारतीय ग्रंथों का अध्ययन आवश्यक है। उनके हर संभव प्रयत्नों से सन् 1846 में मान्नानम में एक संस्कृत विद्यालय की स्थापना हुई, जो बाद में हाई स्कूल और फिर कॉलेज बन गया।

दलितों और अनाथों के उद्धारक

छूआछूत से ग्रसित समाज में उस समय सब विद्यालयों में दलितों का प्रवेश निषेध था। महात्मा गाँधी के दलितों को 'हरिजन' कहकर गले लगाने से करीब सौ साल पहले ही संत चावरा ने उन्हें ईश्वर की संतान कहकर अपना लिया और उनको समाज में ऊपर उठाने और समान अधिकार दिलाने की कोशिश की। उन्होंने दृढ़ निश्चय किया कि अपने समुदाय की पाठशालाओं में छुआछूत या किसी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए। उन्होंने देखा कि दलित और गरीब लोग अपने बच्चों को इसलिए स्कूल नहीं भेज रहे हैं कि उन्हें दोपहर

का भोजन नहीं मिल पाता था। अत: वे उन्हें भी अपने साथ मजदूरी करने ले जाते थे। तब उन्होंने उन निर्धन बच्चों के लिए मध्यान्ह भोजन, किताबें और कपड़े भी स्कूल से देने की व्यवस्था की।

पहला अनाथालय और मुट्ठी भर धान

आज देश के विभिन्न भागों में अनेक अनाथालय कार्यरत हैं। परन्तु आज से 150 वर्ष पहले शायद इसके विषय में किसी ने सोचा हो। परन्तु संत चावरा ने इसे एक अनिवार्य आवश्यकता माना। उन्होंने अपने जन्म स्थान कैनकरी में एक अनाथ आश्रम उन लोगों के लिए स्थापित किया जिनका कोई नहीं था, जो अनाथ थे। उन्होंने कैनकरी निवासियों को पत्र द्वारा समझाया कि दीन, रोगी और अनाथों की सेवा करते समय उनमें प्रभु येसु का चेहरा देखें और जैसे प्रभु की सेवा करते हैं उसी प्रकार उनकी सेवा करें। लोगों से चंदा इकट्ठा करके अनाथ आश्रम के लिए उन्होंने एक स्थायी निधि कोष भी जमा करके रखा। यह भारत का सबसे पहला अनाथ आश्रम था।

गरीबों की सेवा तो मानों संत चावरा के खून में समायी थी। उन्होंने लोगों से निवेदन किया कि वे खाना पकाते समय केवल एक मुट्ठी चावल अलग रख दे जो गरीबों के काम आयेगा। यह चावल महीने के अंत में गिरजाघर में लाया जायेगा। जहाँ वह गरीबों को बाँट दिया जायेगा। यह प्रथा केवल केरल में ही नहीं बल्कि कई स्थानों के कैथलिक परिवारों में आज भी कायम है।

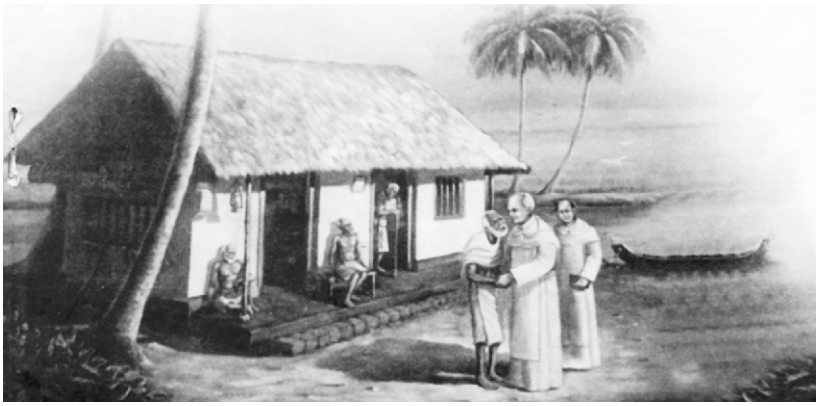

एक संदेश गीत में संत चावरा लिखते हैं—

''जिस दिन किसी का भला न किया हो
वो दिन तुम्हारा व्यर्थ गया है,
आँसू किसी का जो किया अनदेखा
याद करो वह प्रभु का ही बहा है।
रोगी की सेवा करते समय तुम
ध्यान रहे वो है रूप प्रभु का
कोई बड़ा नहीं, न कोई छोटा
सब में तुम पाते चेहरा प्रभु का।''

वैदिक विद्यार्थियों को प्रशिक्षण

संत चावरा का यह अटूट विश्वास था कि केरल के लोगों के आत्मिक जीवन का भविष्य पवित्र एवं सुशिक्षित पुरोहितों पर निर्भर करता है। सुशिक्षित एवं पवित्र पुरोहितों को प्रशिक्षण देने के लिए संत चावरा पूर्ण योग्य थे। उनमें ज्ञान का भंडार था। अपने सेमिनरी जीवन में उन्होंने अपार ज्ञान संचय कर लिया था।

वे कहा करते थे कि सामान्य लोगों की अपेक्षा पुरोहितों में एक अलग विशेषता एवं योग्यता होनी चाहिए। इस प्रकार के पुरोहितों को तैयार करने के लिए उनकी नियुक्ति हुई। इसके लिए एक सेमिनरी अत्यावश्यक थी। इसके लिए उन्होंने मान्नानम में एक सेमिनरी की स्थापना की। इसके बाद सन् 1866 में एलतुरूत्त तथा सन् 1868 में स्थानों में भी सेमिनरियों की स्थापना की गई। संत कुरियाकोस के नेतृत्व में अनेक कार्य हुए। पुरोहितों की शिक्षा प्रशिक्षण के लिए अनेक गुरुकुल (सेमिनरी) खोले गये। विश्वासियों एवं पुरोहितों के लिए वार्षिक आध्यात्मिक साधनों को चलाना, काथलिक शिक्षा का प्रचार करने के लिए एक प्रकाशन की स्थापना करना, सामान्य शिक्षा के लिए पाठशालायें खोलना, निराश्रितों एवं मरणासन्नों के लिए सेवा केन्द्र खोलना तथा शिशुओं की ओर विशेष ध्यान देना प्रमुख है।

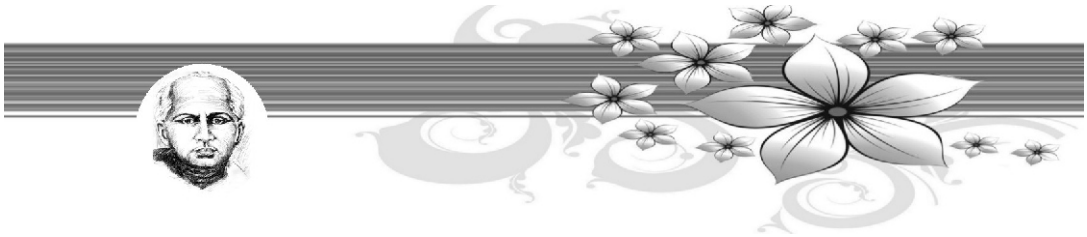

4

आध्यात्मिक जीवन के कुछ पहलू

प्रार्थना में शक्ति

संत चावरा ईश्वर की कृपा में पूर्ण आस्था रखकर कार्य करते थे। जितना वह बाहरी कार्यों में व्यस्त थे उतना ही गहरा उनका आध्यात्मिक जीवन था। वह ध्यान और मनन-चिंतन द्वारा ईश्वर से गहरा सम्बन्ध रखते थे। वह ईश्वर को हमेशा 'अब्बा' बुलाते थे। उन्होंने अपने जीवन की नींव पत्थर इसी सम्बन्ध में डाल रखी थी कि ईश्वर उनके प्यारे पिता हैं और वह उनका प्रिय पुत्र। प्रार्थना के बारे में उनकी अवधारणा यह थी—''अपने साथ बात करने के लिए ईश्वर ने मनुष्य को जो वरदान दिया है उसी का नाम है प्रार्थना।'' संत चावरा के

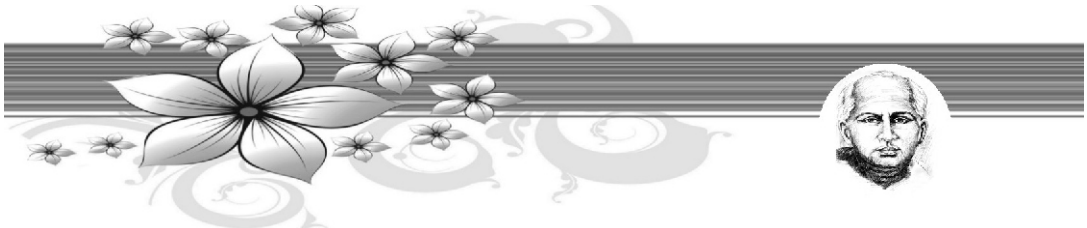

लिए ईश्वर सर्वोपरी और सब कुछ है। वह अपने महाकाव्य 'आत्मानुतापम' में लिखते हैं—

सर्वमंगल देवा, शरणागत मय सर्वेश्वरा
श्वासों में तू हैं समाया जीवन में तू ही छाया
तू है पिता, प्यार भी तू
तू है पानी भोजन तू
हर पल मेरा आसरा तू
तुम बिन किसकी शरण जाऊँ।

सचमुच में संत चावरा एक संत पुरुष थे। कई बार अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। फिर भी पराजय अथवा निराशा को पास नहीं फटकने दिया। वे विश्वास की दृष्टि से ही सृष्टिकर्ता ईश्वर को देख सके और सबको अपने लक्ष्य तक पहुँचाने वाले ईश्वर की आराधना कर सके। अपनी ही संस्था सी० एम० सी० सभा की धर्म बहनों को एक बार उन्होंने इस प्रकार लिखा था, ''अपनी भूख को शब्दों में प्रकट करने में असमर्थ बच्चे को यथा समय नींद से जगाकर दूध पिलाने वाली माँ के समान हैं ईश्वर।'' इसी प्रकार के अटूट विश्वास से प्रेरणा पाकर वे प्रार्थना करते थे। उनकी प्रार्थना और मनन-चिन्तन का मुख्य स्रोत बाईबिल था। उनके जीवन पर अय्यूब, ऐस्तर, इस्राएली लोग, जकेयूस और उड़ाऊ पुत्र का भी प्रभाव है जिनके बारे में वह अपनी पुस्तक में बताते हैं।

परमप्रसाद के उपासक

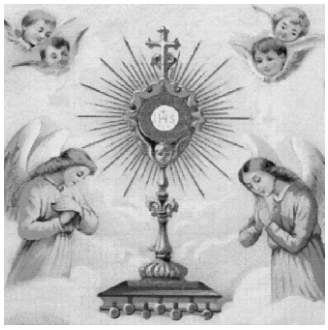

परमप्रसाद में उपस्थित प्रभु येसु के प्रति संत चावरा की भक्ति असीम थी। पवित्र संदूक में रोटी के रूप में उपस्थित अपने प्रभुवर के सामने घंटों प्रार्थना करते और अपने प्रभु से उनका संदेश सुनाने के लिए मदद माँगते थे। वे कहते थे, ''मेरे प्रभुवर जो भी कार्य मैं कर रहा हूँ सब तेरे दिव्य चरणों में समर्पित है तू ही उनको संभालने वाला है।''

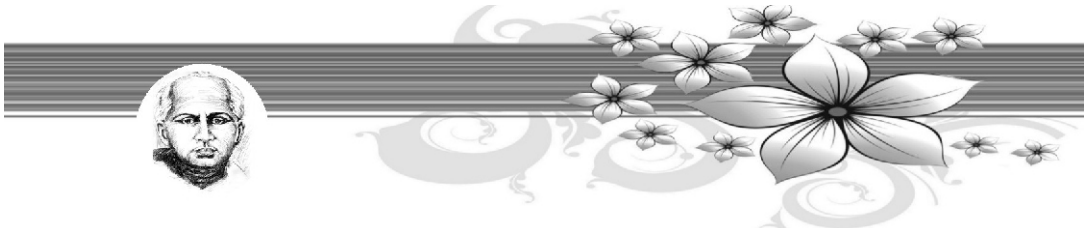

संत चावरा ने महीने के पहले शुक्रवार को सब लोगों को पाप स्वीकार कराया व परमप्रसाद ग्रहण कराया। परमप्रसाद में उपस्थित प्रभु येसु की आराधना एक घंटा करने को हर पल्ली को आदेश दिया। गिरजाघरों में ही नहीं, बल्कि हर सन्यास भवन, स्कूल, छात्रावास और हर ईसाई संस्थाओं में इस भक्ति साधना को प्रचुर प्रचार मिला।

परमप्रसाद की चालीस घंटों की भक्ति का आरम्भ संत कुरियाकोस ने ही किया। सन् 1899 के चालीसे के पहले गुरुवार, शुक्रवार और शनिवार को पहली बार चालीस घंटे की आराधना कूनम्माव आश्रम के गिरजाघर में सम्पन्न हुई। संत चावरा ने परमप्रसाद की आराधना को न केवल जनसामान्य में प्रचलित किया बल्कि अपने व्यक्तिगत जीवन में भी इसको विशेष महत्व दिया। परमप्रसाद में उपस्थित प्रभु येसु की भक्ति में वह लीन रहते और आलौकिक आनंद का अनुभव करते थे।

पवित्र कलीसिया के प्रति प्रेम

संत चावरा ने भी संत पौलुस के समान येसु ख्रीस्त के रहस्यमयी शरीर को गहराई से अनुभव किया है। वह न तो येसु को लोगों से अलग होते हुए देख सके और न तो लोगों को येसु से। इसलिए येसु को प्यार करने का अर्थ है कलीसिया को प्रेम करना। इसलिए संत चावरा ने केरल कलीसिया की एकता के

लिए बहुत बल दिया। उन्होंने उस समय कलीसिया के विरुद्ध फैली हुई हर बुराइयों का अंत करने के लिए कठिन मेहनत की। उन्होंने लोगों के आध्यात्मिक विकास के लिए पवित्र यूख्रीस्त पर बहुत बल दिया। इसके लिए उन्होंने अनेक साधनाओं का आयोजन भी किया।

संत चावरा कलीसिया को, प्रभु येसु ख्रीस्त की वधू और सभी विश्वासियों की वधू भी मानते हैं। वह धर्म बहनों को याद दिलवाते हैं कि वे कलीसिया के बारे में सोचने योग्य और कलीसिया के लिए ही जीने योग्य बननी चाहिए। संत चावरा हम सबको येसु के प्रेम में बने रहने के लिए आमंत्रित करते हैं—

''येसु के प्रेम में जीये
उनकी उपस्थिति में सदैव रहे
सदैव उनके साथ चले
सदैव उनके साथ बातें करे।''

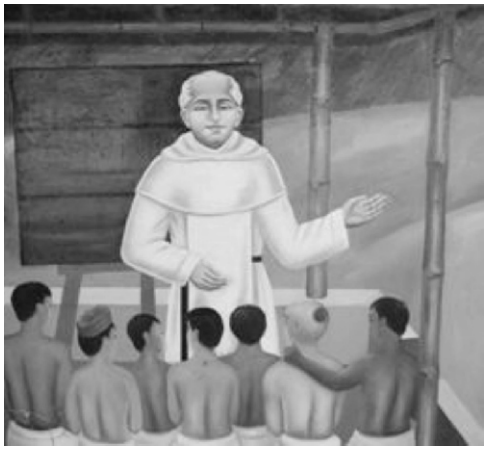

संत चावरा को पूरा यकीन था कि उनकी जिम्मेवारी आत्माओं को बचाना है। इस तरह उनका प्रेम कलिसिया के लिए अपार था।

प्रेमी और दयालु मनुष्य

संत चावरा एक परमार्थ और ईमानदार हृदय के स्वामी थे। लोग साक्ष्य देते हैं कि वह सदा बच्चों जैसे निर्मल और निष्कपट थे। उन्होंने बहुत बार धन सम्बन्धी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। जिसने भी किसी प्रकार की मदद की है उन मददगारों को वह कृतज्ञता के साथ स्मरण करते थे। जब वह बीमार पड़े थे, उस समय उनका ईलाज करने वाले वैद्य को और उनकी सेवा करने वाले

अपने शिष्यों को भी वह कृतज्ञता के साथ स्मरण करते हैं। अपने विरुद्ध झूठा अभियोग चलाने वाले व्यक्ति को भी उसकी जरूरत में वह प्रेम और करूणा के साथ मदद करते थे। जब पल्लिपुरम प्रदेश में चेचक की बीमारी फैल रही थी और बहुत से लोग मर रहे थे तो वह तिरस्कृत और उपेक्षित रोगियों की सेवा करने और मरणासन्न रोगियों को तेल-मलन संस्कार देने जाते थे।

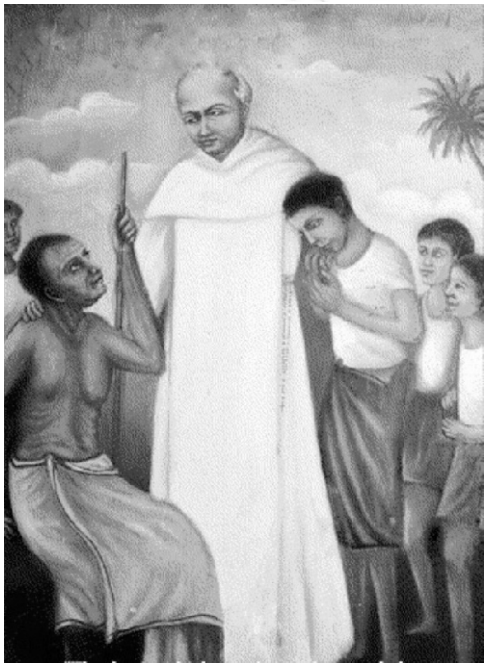

संत चावरा का जीवन अपने सन्यासी जीवन के आरम्भ से अंत तक अपने संघवासियों के लिए महान् आदर्श का जीवन था। वे नये धर्म संघ के नियमों को अत्यन्त प्यार करते और आदरपूर्वक मानते थे। यह प्यार अपने सह-सन्यासियों के दिल में भी बढ़ाने की मेहनत अपने उपदेश और उदाहरण द्वारा किया करते थे। अपने अंतिम दिनों में वे अपने साथियों से कहते थे ''आश्रमों की गरिमा, ईंट और पत्थरों से नहीं, पर सदस्यों की भक्ति और सद्गुणों पर आधारित है।'' उनके समय के सभी पुरोहित उनको संत मानते थे और अत्यन्त आदर सम्मान के साथ उनसे व्यवहार करते थे। वह अपने सह-सन्यासियों की जरूरतों को बिना पूछे ही पूरी कर देते थे। उन्होंने सोलह वर्ष तक धर्म संघ की सेवा की।

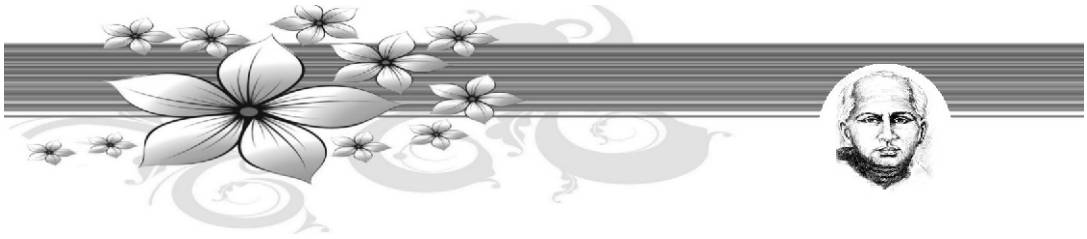

5

रोकोस पाखंडिता के विरुद्द

संत चावरा का एक विशिष्ट कार्य यह था कि उन्होंने रोकोस पाखंडिता के विरुद्ध लड़ाई लड़ी और उस पर विजय प्राप्त की। 19वीं सदी में मलाबार कलीसिया में रोकोस शीश्मा ने बड़ी समस्या पैदा कर दी थी। प्रेरित संत थोमस द्वारा स्थापित सीरियन कलीसिया चौथी सदी से लेकर 1599 की उदयंपेरूर महासभा तक बाबेल पात्रीयर्कीस द्वारा भेजे गये धर्माध्यक्षों के अधीन थी। उन्होंने रोम तथा गोवा के अधिकारियों से बार-बार निवेदन किया कि मलाबार में स्थानीय धर्माध्यक्ष हो, जिससे उनके सामाजिक तथा सांस्कृतिक अखण्डता की सुरक्षा एवं उत्थान हो सके। लेकिन उनकी यह माँग पूरी न हो सकी। कुछ साहसी लोगों ने उस माँग को लेकर बाबीलोन के प्राचीन धर्माध्यक्ष से संपर्क किया। बाबीलोन के प्राचीन धर्माध्यक्ष जोसेफ अबूदी ने बिना अधिकार पत्र और संत पिता के अनुमति के बिना धर्माध्यक्ष रोकोस को केरल भेजा। केरल की कलीसिया

का अध्ययन करके उसकी रिपोर्ट भेजने के लिए वे भेजे गये थे। एक सीरियन बिशप के आने के समाचार ने ख्रीस्तीयों के बीच संतोष पैदा कर दिया। 1 मई 1861 में जब धर्माध्यक्ष रोकोस कोचिन पहुँचे तो उनका शानदार स्वागत किया गया। धर्माध्यक्ष रोकोस ने केरल की कलीसिया पर अधिकार जमाना आरम्भ कर दिया। रोकोस ने मलाबार के 154 गिरजाघरों में से 86 को पूर्णरूप से तथा 30 को आंशिक रूप से अपने अधिकार में कर लिया। इस अनाधिकृत अधिकार को विच्छेद या पाखंडिता कहा जाता है। उसके विरुद्ध वेरोपली के धर्माध्यक्ष की कोशिशें सफल नहीं हुई। उन्होंने संत चावरा को मलाबार कलीसिया का विकार जनरल नियुक्त किया। संत चावरा ने रोकोस के आगमन का समाचार सुनते ही अपने पत्रों द्वारा लोगों को सचेत किया था। रोकोस ने धमकी और प्रलोभन से संत चावरा को अपने वश में करना चाहा। उनकी कठोर मुद्रा तथा अथक परिश्रम के आगे रोकोस के उस अनुचित अधिकार की कुछ न चली। 16 जून 1861 को संत चावरा ने रोकोस के विषय में संत पिता को लिखा और संत पिता ने बाबिलोन प्राचीन धर्माध्यक्ष को आज्ञा दी कि वह रोकोस को वापिस बुला लें और रोकोस को कलीसिया से निष्कासित किया गया। 1862 को यह धर्मयुद्ध समाप्त हुआ। रोकोस वापिस चला गया। इस प्रकार संत चावरा ने उस पाखंडिता से कलीसिया का उद्धार किया और विश्वासियों को सही मार्ग पर लाने में वे सफल हुए।

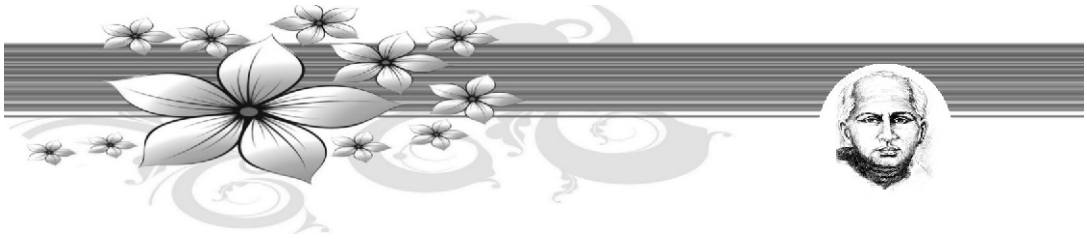

6

कवि एवं ग्रंथकार

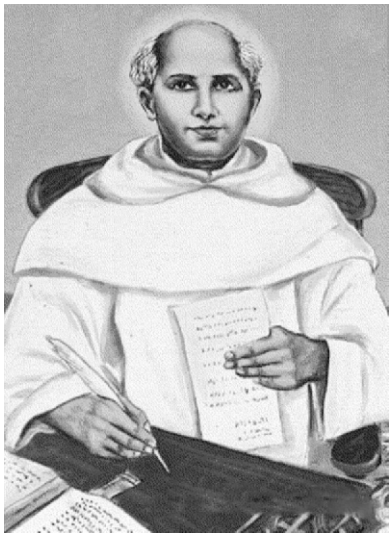

संत चावरा, जिसने काथलिक समाज में सबसे पहले छापाखाने की स्थापना की, एक प्रशस्त कवि एवं ग्रंथकार भी थे। उन्होंने मलयालम साहित्य में अपनी पहचान बनाए रखी हैं और मलयालम साहित्य को कई कृतियाँ प्रदान की।

उन्हे मालूम था, जन शिक्षा के लिए विद्यालय, ग्रंथों के लिए छापाखाना बनाने से उनका कार्य पूर्ण नहीं हुआ था। अच्छी पुस्तक विशेषकर आध्यात्मिक ग्रंथों की रचना में वे तत्पर थे।

उनकी काव्य रचनाओं में महत्वपूर्ण है—

महाकाव्य—'आत्मानुतापम'

खण्डकाव्य—'अनस्तासिया की शहादत'

शोकगीत—'मृत्युपर्व'

गद्य कृतियों में मुख्य हैं—

'ध्यानसंवाद', 'भले पिता का वसीयतनामा' और 'इतिवृत्त'।

आत्मानुतापम

यह काव्य रचना प्रभु येसु और उनकी माँ मरियम के जीवन पर आधारित है। लेकिन उनके जीवन का विस्तार से विवरण करते समय कवि अपने जीवन के विभिन्न पहलुओं का अवलोकन करता है। प्रभु येसु और उनकी माता को जो दुख सहना पड़ा, उसका कारण कवि के अनुसार अपने पाप हैं। ''आत्मानुतापम'' प्रभु येसु और उनकी माता के जीवन पर मनन चिन्तन करते हुए कवि का पश्चाताप है। आत्मानुतापम में 12 अध्याय हैं। इस महाकाव्य में उनका अत्यन्त गहरा आध्यात्मिक दर्शन है।

अनस्तासिया की शहादत

इसकी रचना लगभग 1861 में हुई। इसकी घटना इस प्रकार है। तीसरी सदी में रोम में सोफिया नाम सन्यासिनी द्वारा स्थापित मठ में नव दीक्षित सदस्या थी, सुंदर और सुशील कन्या अनस्तासिया। सम्राट वलेरियन के मंत्री प्रोबो ने उसकी सुंदरता के बारे में सुनकर उसे राजभवन में ले जाने के लिए सैनिक भेजा। मंत्री ने उसे आज्ञा दी कि वह ईसाई धर्म छोड़कर सम्राट के धर्म को स्वीकार करे। वह इन्कार करती है तो सम्राट और मंत्री उसे कई प्रकार के दंड देते हैं। घोर पीड़ाओं को भी वह सह लेती है। अंत में उसकी शहादत होती है।

यह करूणा और वीर रस प्रधान काव्य रचना है। अत्यंत सुंदर शब्दों से बुनी यह रचना बेहद हृदयस्पर्शी है।

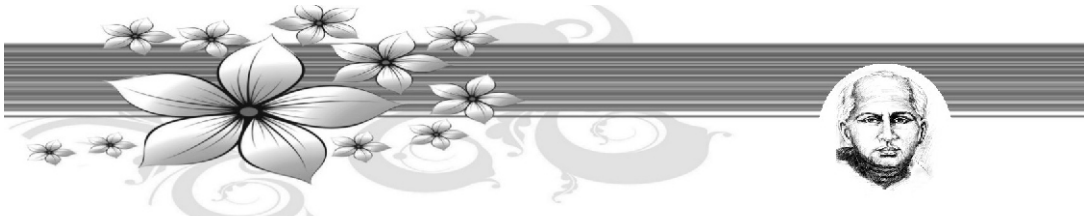

शोकगीत–''मृत्युपर्व''

जिस घर में मृत्यु हुई है, उस घर में गाने के लिए इसकी रचना हुई है।

गद्य रचनाएँ

1. भले पिता का वसीयतनामा–अपने जन्म स्थान कैनकरी के लोगों को एक अंतिम उपदेश के रूप में यह लिखा गया है। कैनकरी के लोगों के लिए लिखा है तो भी इसमें सबको वह अपने बच्चों के स्थान में रखते हैं। व्यक्ति और पारिवारिक जीवन के मूल्यों पर जैसे पारिवारिक प्रेम, विनय, क्षमाशील, न्याय, ईश्वर भक्ति आदि विषयों पर इसमें चर्चा की गई है।

2. ध्यान संवाद–ध्यान साधना की गहराईयों में रहे संत चावरा ने अपने मनन-चिन्तन को संवाद के रूप में लिखा है। यह संवाद ईश्वर को अपने प्रेमी पिता के रूप में देखकर पिता-पुत्र का संवाद है। संत चावरा ईश्वर को हमेशा ''अब्बा'' शब्द से ही संबोधन करते हैं। उन्होंने लिखा—''ध्यान करने का अर्थ ईश्वर से बातचीत करना है, प्रेम में ईश्वर से एक होकर प्रीतम से प्रेयसी के संवाद जैसे संवाद करना है।''

3. इतिवृत्त–1829 से 1870 तक के 40 वर्षों का इतिहास सी०एम०आई०, सी०एम०सी० समाजों का इतिहास एवं मलाबार कलीसिया का इतिहास इसमें है। उस समय जब इतिहास रचना को कोई महत्व नहीं दिया गया था, संत चावरा ने इतिवृत्तों को लिखना प्रारम्भ किया और ऐसा लिखने के लिए दूसरों को प्रेरणा भी दी। संत चावरा द्वारा लिखे गये बाईबिल पर आधारित कई लघु नाटिकाएँ भी हैं जो भक्ति-रस प्रधान हैं।

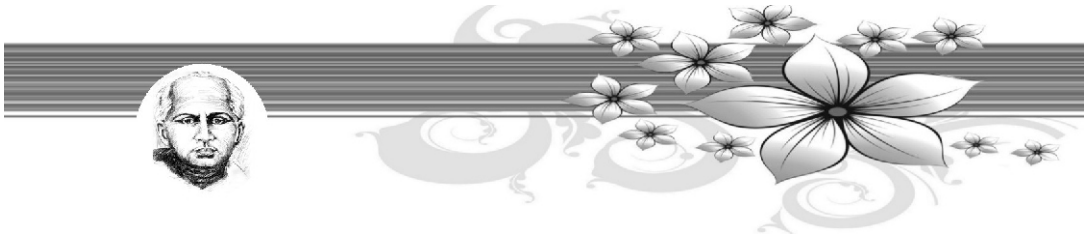

7

पूजनविधि में नवीनीकरण

सीरोमलाबार कलीसिया की पूजनविधि में अनेक महत्वपूर्ण सुधारों का सेहरा उन्हीं के सिर पर बँधता है। केरल कलीसिया का पाश्चात्य शासन के अधीन आने के बाद उसमें सीरियन पूजन विधि में एकता न रही। सन् 1599 की उदयंपेरूर महासभा पूजनविधि अनेक परिवर्तन लाई थी। जो पूजनविधि नष्ट हो गई थी, उसे पुन: स्थापित करना उस समय के वातावरण में आसान काम नहीं था। अत: उसमें परिवर्तन लाकर उसे एकरूप प्रदान करने का प्रयास संत चावरा ने किया। पवित्र मिस्सा बलिदान तथा संस्कारों को सजीव बनाने की पद्धतियों को उन्होंने सूत्रबद्ध किया।

पुरोहितों को वार्षिक आत्मसाधन का आदेश दिया गया। इसके अतिरिक्त मृतकों की अंतयेष्टी, पुरोहितों की प्रार्थना तथा मिस्सा समारोह में भी अनेक परिवर्तन किए गये। उन दिनों गिरजाघर में प्रवचन देने की प्रथा नहीं थी। लोगों को सुसमाचार सुनाने की बात किसी ने सोची भी नहीं थी।

संत चावरा ने इसमें काफी परिवर्तन किये। उन्होंने जगह-जगह जाकर गिरजाघरों में प्रवचन देना आरम्भ किया और साथ ही अन्य पुरोहितों को ऐसा करने के लिए प्रोत्साहन किया।

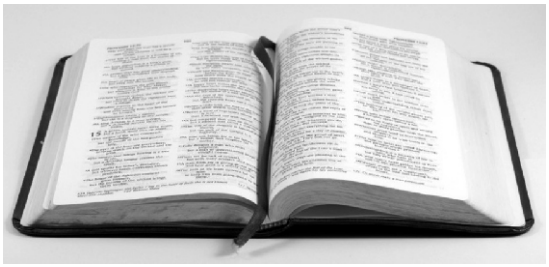

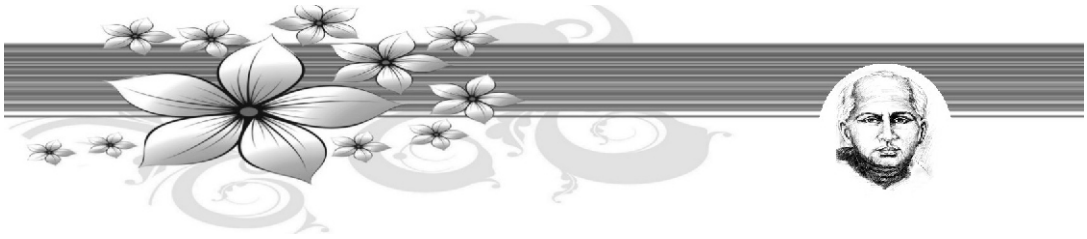

8

अंतिम समय और स्वर्गवास

1870 में संत चावरा का स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। अम्बराकाट आश्रम में रहना स्वास्थ्य के लिए अधिक उचित होगा यह सोचकर उनके साथी उन्हें वहाँ से ले गये। लेकिन वहाँ उनका स्वास्थ्य ज्यादा बिगड़ने लगा तो उन्हें वापस कूनम्माव ले आये। उन्होंने अपनी रचना 'मृत्युपर्व' का प्रारम्भ में ही ऐसा लिखा है—''जन्मदिन से मृत्यु का दिन श्रेष्ठ है।'' इससे उनका मतलब था कि मृत्यु से कोई बच नहीं सकता पर उसे सुन्दर और सुखद कोई भी कर सकता है। 2 जनवरी 1871 को उन्होंने अपने आत्मिक पिता के सामने पाप स्वीकार करके परमप्रसाद ग्रहण किया। उनके चेहरे पर विशेष झलक थी। मृत्यु शैय्या के चारों ओर एकत्रित अपने आत्मिक बच्चों को उपदेश देते हुए बड़ी सार्थकता के साथ उन्होंने अपनी अंतिम घड़ी पूरी की। 3 जनवरी 1871 को बड़ी ही कष्टदायक

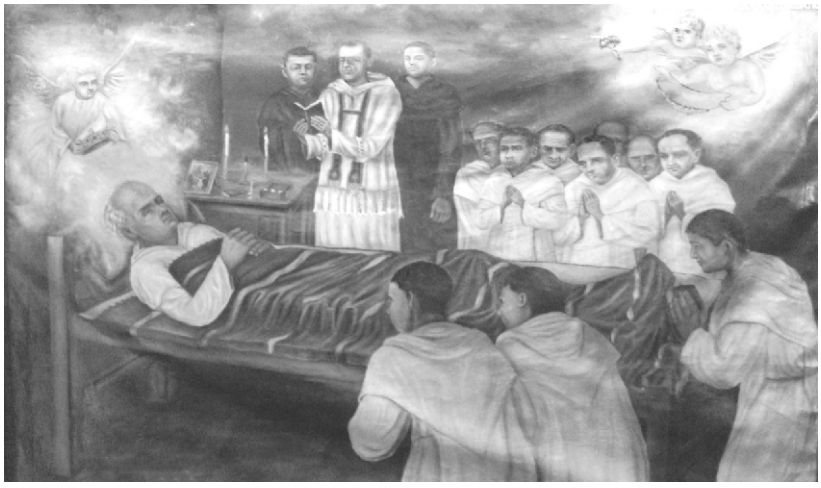

बीमारी के बाद बपतिस्मा की निर्दोषता को सुरक्षित रखते हुए संत चावरा प्रभु में समा गये। कूनम्माव संत फिलोमीना आश्रम में उनका स्वर्गवास हुआ था। देखते ही देखते यह समाचार दूर-दूर तक फैल गया। गिरजाघरों से घंटियों की आवाज गूँजने लगी। इस पुण्य पुरुष के अंतिम दर्शन के लिए आयी भीड़ से गिरजाघर और आश्रम का परिसर भर गया। कूनम्माव आश्रम देवालय में ही उनका अंतिम संस्कार किया गया।

कुछ वर्षों बाद 1 मार्च, 1899 के मान्नानम सी० एम० आई० मठ के संत जोसेफ चर्च में उनके पार्थिव अवशेष लाकर दफनाए गये। उनकी उस समाधि पर उनके हजारों भक्त नियमित रूप से आते तथा अपनी समस्त आवश्यकताओं के लिए ईश्वर से उनकी मध्यस्था के लिए प्रार्थना करते हैं।

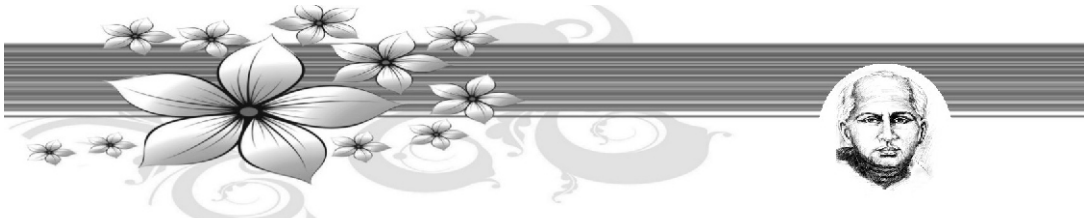

सन्त भरा जीवन

संत चावरा के समकालीन लोग और उनके सह सन्यासीगण उनके जीवन काल से ही उनको संत मानते थे। उनके आध्यात्मिक गुरु फादर लियोपोल्ड जो संत चावरा को करीब से जानते थे, उनको संत मानते थे। संत चावरा से मिले लोग और गिरजाघरों में उनके भाषण सुन लोग उन्हें ''पवित्रता से परिपूर्ण पुरोहित'' मानते थे। वे सदाचार का पालन करते थे। हृदय से निर्मल सजीव विश्वास, आज्ञापालन, परमप्रसाद एवं माता मरिया की भक्ति यही उनके जीवन की निधि थी, यही उनका सबकुछ था। मलाबार ख्रीस्तीयों के लिए उन्होंने अनेक कष्ट सहे। जब वे सीरो मलबार कलिसिया के विकार जनरल थे उस समय रोकोस पाखंडिता के खिलाफ कई बार अपनी जान जोखिम में डाल उसका विरोध किया तथा रोम के सिंहासन के प्रति अपनी गहन, अटल विश्वसता का परिचय दिया। रात-दिन अथक परिश्रम कर उन्होंने चालीस पल्लियों को इस जाल से मुक्त किया। उनके इस पुण्य कार्य से प्रसन्न हो संत पिता पियुष नौवें ने अपने स्वयं के हस्ताक्षर से युक्त उन्हें एक धन्यवाद एवं आभार पत्र भेजकर उनके इस महान् कार्य की सराहना की। अपने पवित्र जीवन तथा ज्ञान के कारण वे सीरियन कलीसिया में काफी आदरणीय थे। 1936 में फादर चावरा को संत घोषित करने का प्रारंभिक कार्यक्रम का प्रारंभ हुआ। 8 फरवरी 1986 को संत पिता जोन पौल द्वितीय ने उन्हें पूजनीय घोषित किया है तथा 23 नवम्बर 2014 को संत पिता फ्रांसिस ने संत घोषित किया है।

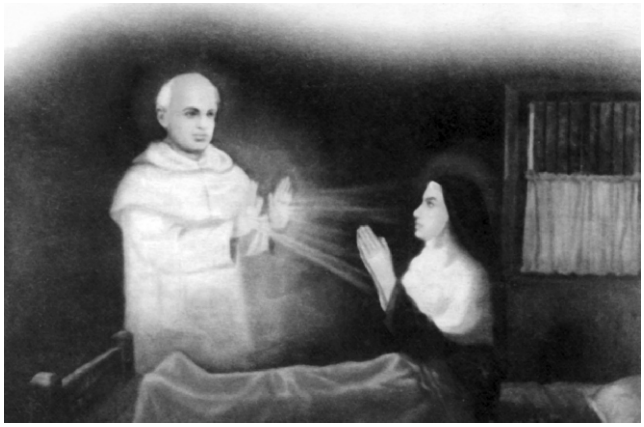

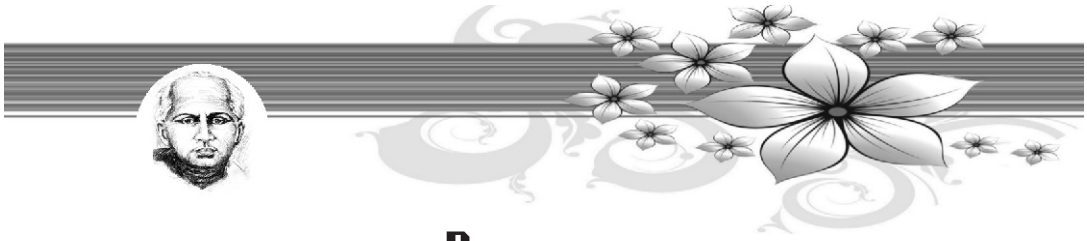

जीवन वृत्तान्त

1805	फरवरी 10	जन्म
1805	फरवरी 18	बपतिस्मा
1828		उपयाचक दीक्षा
1829		पुरोहिताई अभिषेक
1831	31 मई	दर्शन भवन का प्रारंभ
1840		आश्रम में सामूहिक जीवन का प्रारंभ
1846		पहला कैथोलिक संस्कृत विद्यालय का प्रारंभ
1846		केरल में पहली कैथोलिक प्रेस की स्थापना
1855	दिसम्बर 8	सन्यास व्रत समर्पण
1856		प्रेयर जनरल बने
1861		सीरो-मलबार चर्च के विकर जनरल पद पर नियुक्ति
1866	फरवरी 13	प्रथम धर्मबहनों के धर्मसंघ की स्थापना
1871	जनवरी 3	स्वर्गवास
1889		पुण्यावशेष को कूननमावु से मान्नानम लाना
1936		संतत्व की घोषणा कार्यक्रमों का प्रारंभ
1958	जनवरी 1	धर्मप्रांतीय स्तर पर संतत्व घोषणा कार्यक्रमों का औपचारिक उपक्रम
1984	अप्रैल 7	वन्दनीय घोषित
1986	फरवरी 8	पूज्यनीय घोषित
1987	दिसम्बर 27	भारत सरकार द्वारा डाक-टिकट का प्रकाशन
2014	नवम्बर 23	संत घोषित

परिवार पृथ्वी का स्वर्ग

1. परिवार पृथ्वी का स्वर्ग– एक अच्छा मसीही परिवार पृथ्वी पर स्वर्ग है, वहाँ के सदस्य रक्त और प्रेम से बंधे हुए हैं, वे बड़े लोगों के और एक दूसरे के अधीन रहते हैं। वे आपसी सम्मान और एकता में बंधे हुए हैं। हर एक सदस्य के लिए अपना कर्त्तव्य ही जीवन लक्ष्य है।

2. परिवार के बच्चे ईश्वर की देन–आपके बच्चे ईश्वर द्वारा प्रदत्त निधि हैं। उनका अच्छा पालन-पोषण एवं संरक्षण करना आपका कर्त्तव्य है। वे ऐसी आत्माएँ हैं जिन्हें ईश्वर ने आपको इसलिए सौंपा है कि आप मसीह के पवित्र रक्त द्वारा पवित्र करके उन्हें मसीह के सेवक बनायें और अन्तिम न्याय विधि के दिन उन्हें ईश्वर को लौटा दें।

3. पारिवारिक प्रेम की आवश्यकता–परिवार के सदस्यों का आपसी प्रेम इतना दृढ़ एवं गहरा होना चाहिए कि वे प्रेम, शांति और भाईचारे के साथ जिंदगी के दु:ख तकलीफों और समस्याओं का सामना कर सकें।

4. परिवार की दुर्बलता–परिवार के वातावरण में क्रमबद्धता, शांति-भाव और ईश्वरता आदि जीवन की दिलचस्पी बनी रहनी चाहिए। इन

मनोभावों के अभाव में आर्थिक स्थिति अच्छी होने पर भी कई घराने बर्बाद हो गये हैं।

5. परिवार में क्षमा की आवश्यकता–हर एक परिवार में सदस्यों में आपसी संबंध का आधार 'प्रेम' होना चाहिए। रक्त संबंधों से परिपुष्ट देव प्रेम एक-दूसरे को स्वीकार करने और गलतियों को क्षमा करने को उत्प्रेरित करे। खानदानों के बीच मतभेद एवं झगड़ा कभी नहीं होना चाहिए।

6. परिवार में बच्चों के लिए प्रार्थना–बच्चों के अच्छे पालन पोषण में आप का ध्यान होना चाहिए, ईश्वर-सान्निध्य में उन्हें याद करें और उनके लिए रोज प्रार्थना करें।

7. परिवार का सौन्दर्य–आप अपने बच्चों को विनम्रता एवं संयम में बढ़ने की शिक्षा दें। शारीरिक सौन्दर्य को अधिक महत्व देना एवं अश्लील वस्त्रधारण विपत्ति या विनाश की ओर ले जायेगा।

8. परिवार में सदग्रन्थ परायण–आप अपने बच्चों को नैतिक मूल्यों और सत् प्रेरणाओं से ओत-प्रोत पुस्तकों को पढ़ने दें। साथ ही साथ यह भी देखें कि वे गन्दी किताबें तो नहीं पढ़ते क्योंकि ये किताबें सूखी घास में आग छुपाने के समान हैं।

9. परिवार में बच्चों की शिक्षा–बच्चों की शिक्षा में माता-पिता अधिक ध्यान दें। यह सभी समय-समय पर देखें कि उनकी दोस्ती गलत मार्ग पर न जाये।

10. सजा में विवेक–बच्चों को डाँटने और सजा देने में माता-पिता विवेक एवं संयम रखें।

11. बचपन से ही प्रार्थना सिखाना–बचपन से ही बच्चों को प्रार्थना करना सिखलायें। वे ईश्वर के विश्वास में दृढ़ बने रहें।

12. दिनचर्या की आवश्यकता–आपकी दिनचर्या में अच्छी निष्ठा और क्रमबद्धता होनी चाहिए। वह बिना जिल्दबन्द किताब के समान न हो।

13. प्रभु का मार्ग दिखाना–जब बच्चे सयाने हो जाते हैं तब माता-पिता उन्हें इतनी आजादी दें कि वे अपनी बुलाहट या प्रभु का मार्ग स्वयं चुन सकें।

14. धन संपत्ति का बंटवारा समय पर करना–माता-पिता के बूढ़े होने से पहले ही अर्थात् उनके बुद्धिबल कमजोर होने से पहले ही वसियतनामा करके संपत्ति का सही बँटवारा करना चाहिए।

15. माता-पिता की सेवा करना–बच्चे हमेशा अपने माता-पिता का आदर करें, उनकी वृद्धावस्था और बीमारी में बहुत ध्यान से उनकी देख-रेख करें, इससे बच्चों को बहुत ईश्वर कृपा मिलेगी।

16. दूसरे के साथ संबंध–आपका प्रेम और संबंध विवेकपूर्ण हो, आपके संपर्क और दोस्ती केवल धार्मिक लोगों के साथ हो।

17. क्षमाशील व्यवहार–बदले की भावना से दूसरों के साथ व्यवहार करना जानवर का स्वभाव है। लेकिन मानवीय मन की शक्ति एवं विशेषता इसी में निहित है कि वह विवेक और क्षमा के साथ व्यवहार करे।

18. न्यायालय ना जाना–अपने भाई या परिवार के अन्य सदस्यों के खिलाफ अगर मुकदमा हो तो उन्हें न्यायालयों तक न ले जायें। यह हृदयों के परस्पर संबंधों की दूरी का कारण बन जायेगा।

19. उधार न लेना–दूसरे से उधार लेकर खर्चा न करें। आपकी ऋणाबाध्यता आने वाली पीढ़ियों के लिए बोझ बन जायेगी।

20. दिखावा न करना–यदि आप धनी हैं तो उसका दिखावा न करें। विनम्रता से जीवन बिताने का प्रयत्न करें। विवाहोत्सव जैसे अवसरों में अनावश्यक आडम्बर अथवा धूम्रपान के दिखावे से दूर रहें, वह उस आग के समान क्षण भर ही टिकता है जो सूखी घास के ढेर को क्षण भर में भस्म कर देती है। वह छोटा सा दीपक जो सदैव जलता रहता है उस आग से कहीं अधिक श्रेष्ठ है।

21. कंजूस न होना–अनावश्यक आडम्बर के समान कंजूसी भी एक बुराई है। आपका धन मानवों की भलाई के लिए खर्च करें, अन्यथा वह धार्मिकता नहीं।

22. संबंध किन लोगों से रखना–आप ऐसे परिवारों से रिश्ता बनायें जो ईश्वर में विश्वास और निष्ठा रखते हैं। संबंधों का मुख्य मापदण्ड संपत्ति नहीं होनी चाहिए।

23. कठिन मेहनत–अपने परिवार में परिश्रमशीलता बनाये रखें। आलस पारिवारिक रिश्तों में शिथिलता लाती है।

24. शराब–शराब पीने की बुरी आदत आपके घर में प्रवेश न कर पाये वह पारिवारिक रिश्तों में शिथिलता लाती है।

25. व्यापार में बेईमानी न होना–अपने व्यापार कार्यों में धार्मिकता को न छोड़ें। बेईमानी और चालाकी से जो धन अर्जित है वह बर्फ के समान जल्दी ही पिघल जायेगा।

26. दूसरों की सेवा–आपकी जिन्दगी में ऐसे एक भी दिन न गुज़रे जिसमें आपने दूसरों की सेवा या मदद न की हो। जब ईश्वर आपकी ज़िंदगी का लेखा देखेगा तो उन सेवारहित दिनों की गिनती नहीं होगी। भिखारियों को अपने द्वार से खाली हाथ न लौटायें।

27. उचित वेतन देना–आप अपने नौकरों को न्यायोचित वेतन दें, गरीबों और दुर्बलों की कभी निन्दा नहीं करें। उनके आँसुओं की बूँदें आपके विरुद्ध ईश्वर के सामने गवाही देंगी।

28. पूजा कार्य में भाग लेना–पूजा-पाठ इतनी सक्षम औषधि है जो परिवार को ज्योर्तिमय बनाये रखती है। इसलिए अगर हो सकें तो रोज पूजा-पाठ करके ही सोयें।

29. रविवार को कैसे मनायें–रविवार के दिन में अथवा अन्य हुक्म पर्व के दिनों में सिर्फ पूजा-पाठ करना ही पर्याप्त नहीं है। इन दिनों का अधिक समय अच्छे काम करने, अच्छी किताब पढ़ने और ईशवचन सुनने में व्यतीत करें। गरीबों के घर जाकर उनकी सहायता करें, बीमारों से मिलकर उनको सान्त्वना दें और अपने आत्मिक जीवन के लिए योग्य कार्य करके ही ऐसे दिन को पवित्र मनायें।

30. साक्षी बनना–परिवार में कितने भी बड़े मेहमान आये हों फिर भी पारिवारिक प्रार्थनाएँ कभी नहीं छोड़नी चाहिएँ, उसे निश्चित समय पर ही करना चाहिए, आपका यह काम दूसरों के सामने साक्ष्य होगा।

परिवारों के लिए प्रार्थना

पिता-पुत्र-पवित्रात्मा, त्रियेक ईश्वर हम आपको धन्यवाद देते हैं। क्योंकि आपने ईश्वरीय जीवन हमारे अन्दर जागृत करने और अपने महत्व के लिए हमारे आदर्श-पिता संत चावरा को हमें प्रदान किया है।

संत चावरा ! हमारे परिवारों के लिए आप विशेष मध्यस्थ हैं। आपके समान ईश्वरीय विश्वास और पवित्रता में हम भी आगे बढ़ें। प्रेम और एकता में हम स्थिर रहें। हे संत हमारे परिवारों में माता—पिताओं को आनंद, वधू-वरों को मेलजोल और संतान भाग्य, युवक-युवतियों को सही मार्गदर्शन, प्रज्ञा-पूर्ण भविष्य और कामयाबी, छोटे-छोटे बच्चों को ज्ञान एवं अच्छा स्वास्थ्य आदि, प्रभु ईसामसीह के द्वारा परमेश्वर से दिलवा दें। सबको प्यार करने, ईश्वर की इच्छा पूरी करने और उचित आमदनी कमा के संतोषपूर्ण जीवन बिताने के लिए है, हे संत चावरा हमारे लिए प्रार्थना करें।

पवित्र परिवार की भक्ति के उत्तम नमूना, धन्य पिता, आज के युवक-युवतियों को अपनी बुलाहट को पहचानने की प्रज्ञा और ज्ञान प्रदान करें, ताकि वे पुरोहिताई और धर्मसंघी जीवन के लिए, बड़ी उदारता से अपने आप को समर्पित करें। साथ ही हमारे लिए यह विशेष कृपा ..... प्रभु से प्राप्त करें। आमेन।

1 हे हमारे पिता ..... 1 प्रणाम मरिया ..... 1 पिता पुत्र .....

संत कुरियाकोस एलियास चावरा के योगदान

1.	भारत के प्रथम देशज धर्म संघ की संस्थापन)	1831
2.	इतवार-प्रवचन, पल्लियों में आत्मिक साधना, पुरोहितों के लिए वार्षिक आत्मिक साधना आदि का प्रचार-प्रसार	1831
3.	सिरियन काथलिक धर्म के सार्वजनिक गुरुकुल का मान्नानम में आरम्भ	1833
4.	'क्रूस का रास्ता' की भक्ति का अनुष्ठान केरल में मान्नानम में आरम्भ	1838
5.	सिरियन काथलिक धर्म के महाधिकारी और पुरोहितों के शिक्षक के पद पर नियुक्ति	1844
6.	सिरियन काथलिक धर्म के प्रथम छापाखाना और पुस्तकों का प्रकाशन केन्द्र की मान्नानम में स्थापना	1846
7.	काथलिक कलीसिया की प्रथम संस्कृत पाठशाला की स्थापना	1846
8.	सिरियन काथलिक के प्रथम विश्वास-प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना मान्नानम में	1853
9.	अपने धर्म संघ का नाम 'निष्कलंक मरियम कार्मलाइट धर्म संघ' दिया जाना	1855
10.	भारत के प्रथम ईसाई धर्म संघ के पुरोहित-संत चावरा का व्रत समर्पण	1855
11.	केरला सभा के प्रथम महा अधिकारी	1861
12.	रोकोस के पाखण्डिता विच्छिन्न संप्रदाय के निर्मलन के वीर योद्धा	1861
13.	मलयालम भाषा के प्रथम खंड-काव्य 'अनस्तासिया का आत्मबलिदान' रचा गया	1862

14. ''एक पल्ली में एक पाठशाला'' आरम्भ करने का निर्देश 1864

15. पवित्र माता मरियम की ''मई महीना भक्ति'' का सबसे पहले मान्नानम में शुभारंभ 1865

16. पूजन विधि, पुरोहितों के लिए दैनिक प्रार्थना, मृतकों की याद आदि अनुष्ठानों में नवीकरण का नेतृत्व 1862-1869

17. केरल के प्रथम धर्म बहिनों के धर्मसंघ की स्थापना 1866
आदरणीय लेयोपोलद के सहयोग से कूनम्माव में शुभारंभ

18. पवित्र परमप्रसाद की 40 घण्टे की आराधाना का केरल सभा के कूनम्माव में शुभारंभ 1866

19. बालिकाओं के प्रथम स्कूल और छात्रावास का आदरणीय लेयोपोलद् के सहयोग से कूनम्माव में शुभारंभ 1868

20. एक उत्तम पिताजी के अंतिम उपदेश द्वारा परिवार के लिए संत चावरा कुरियाकोस एलियास के सूक्त दिये गये 1868

21. केरल सभा के प्रथम विश्वासी संघठन सुमृत्यु संघ मध्यस्थ संत जोसफ के नाम पर कैनकरी में स्थापना 1869

22. अनाथों, दरिद्रों और असहाय बुजुर्गों का प्रथम 'स्नेहशाला' (दानी संस्था) की कैनकरी में स्थापना 1869

23. काथलिक कलीसिया की ओर याक्कोबाया पुनः संयोजन के लिए प्रेरित पत्र रोम के प्रति लिखा गया 1869